*व्याकरण की दृष्टि से हिन्दी-उर्दू बोली का परिचय *

आधुनिक साहित्य की रचना खड़ी बोली में हुई है। खड़ी बोली हिंदी में अरबी-फारसी के मेल से जो भाषा बनी वह 'उर्दू' कहलाई। मुसलमानों ने 'उर्दू' का प्रयोग छावनी, शाही लश्कर और किले के अर्थ में किया है। इन स्थानों में बोली जानेवाली व्यावहारिक भाषा 'उर्दू की जबान' हुई।

पहले-पहले बोलचाल के लिए दिल्ली के सामान्य मुसलमान जो भाषा व्यवहार में लाते थे वह हिन्दी ही थी। चौदहवीं सदी में मुहम्मद तुगलक जब अपनी राजधानी दिल्ली से देवगिरि ले गया तब वहाँ जानेवाले पछाँह के मुसलमान अपनी सामान्य बोलचाल की भाषा भी अपने साथ लेते गए। प्रायः पंद्रहवीं शताब्दी में बीजापुर, गोलकुंडा आदि मुसलमानी राज्यों में साहित्य के स्तर पर इस भाषा की प्रतिष्ठा हुई। उस समय उत्तरभारत के मुसलमानी राज्य में साहित्यिक भाषा फारसी थी। दक्षिणभारत में तेलुगू आदि द्रविड़ भाषाभाषियों के बीच उत्तर भारत की इस आर्य भाषा को फारसी लिपि में लिखा जाता था। इस दखिनी भाषा को उर्दू के विद्वान् उर्दू कहते हैं। शुरू में दखिनी बोलचाल की खड़ी बोली के बहुत निकट थी। इसमें हिंदी और संस्कृत के शब्दों का बहुल प्रयोग होता था। छंद भी अधिकतर हिंदी के ही होते थे। पर सोलहवीं सदी से सूफियों और बीजापुर, गोलकुंडा आदि राज्यों के दरबारियों द्वारा दखिनी में अरबी फारसी का प्रचलन धीरे-धीरे बढ़ने लगा। फिर भी अठारहवीं शताब्दी के आरंभ तक इसका रूप प्रधानतया हिंदी या भारतीय ही रहा।

सन् १७०० के आस पास दखिनी के प्रसिद्ध कवि शम्स वलीउल्ला 'वली' दिल्ली आए। यहाँ आने पर शुरू में तो वली ने अपनी काव्यभाषा दखिनी ही रखी, जो भारतीय वातावरण के निकट थी। पर बाद में उनकी रचनाओं पर अरबी-फारसी की परंपरा प्रवर्तित हुई। आरंभ की दखिनी में फारसी प्रभाव कम मिलता है। दिल्ली की परवर्ती उर्दू पर फारसी शब्दावली और विदेशी वातावरण का गहरा रंग चढ़ता गया। हिंदी के शब्द ढूँढकर निकाल फेंके गए और उनकी जगह अरबी फारसी के शब्द बैठाए गए। मुगल साम्राज्य के पतनकाल में जब लखनऊ उर्दू का दूसरा केंद्र हुआ तो उसका हिंदीपन और भी सतर्कता से दूर किया। अब वह अपने मूल हिंदी से बहुत भिन्न हो गई।

हिंदी और उर्दू के एक मिले जुले रूप को हिंदुस्तानी कहा गया है। भारत में अँगरेज शासकों की कूटनीति के फलस्वरूप हिंदी और उर्दू एक दूसरे से दूर होती गईं। एक की संस्कृतनिष्ठता बढ़ती गई और दूसरे का फारसीपन। लिपिभेद तो था ही। सांस्कृतिक वातावरण की दृष्टि से भी दोनों का पार्थक्य बढ़ता गया। ऐसी स्थिति में अँगरेजों ने एक ऐसी मिश्रित भाषा को हिंदुस्तानी नाम दिया जिसमें अरबी, फारसी या संस्कृत के कठिन शब्द न प्रयुक्त हों तथा जो साधारण जनता के लिए सहजबोध्य हो। आगे चलकर देश के राजनयिकों ने भी इस तरह की भाषा को मान्यता देने की कोशिश की और कहा कि इसे फारसी और

नागरी दोनों लिपियों में लिखा जा सकता है। पर यह कृत्रिम प्रयास अंततोगत्वा विफल हुआ। इस तरह की भाषा ज्यादा झुकाव उर्दू की ओर ही था।

*हिंदी और उर्दू का अद्वैत (समानता और अंतर) *

भाषाविद हिन्दी एवं उर्दू को एक ही भाषा मानते हैं। हिन्दी देवनागरी लिपि में लिखी जाती है और शब्दावली के स्तर पर अधिकांशत: संस्कृत के शब्दों का प्रयोग करती है। उर्दू उर्दू लिपि में लिखी जाती है और शब्दावली के स्तर पर उस पर फ़ारसी और अरबी भाषाओं का प्रभाव अधिक है। व्याकरणिक रूप से उर्दू और हिन्दी में लगभग शत-प्रतिशत समानता है - केवल कुछ विशेष क्षेत्रों में शब्दावली के स्रोत (जैसा कि ऊपर लिखा गया है) में अंतर होता है। कुछ विशेष ध्वनियाँ उर्दू में अरबी और फ़ारसी से ली गयी हैं और इसी प्रकार फ़ारसी और अरबी की कुछ विशेष व्याकरणिक संरचना भी प्रयोग की जाती है। अतः उर्दू को हिन्दी की एक विशेष शैली माना जा सकता है।

प्रोफ़ेसर महावीर सरन जैन ने अपने " हिन्दी एवं उर्दू का अद्वैत " शीर्षक आलेख में हिन्दी एवं उर्दू की भाषिक एकता का प्रतिपादन किया है साथ ही हिन्दी साहित्य एवं उर्दू साहित्य के अलगाव के कारणों को भी स्पष्ट किया है। प्रोफ़ेसर जैन के अनुसार " हिन्दी-उर्दू के 'ग्रामर' में कोई अन्तर नहीं है। अपवादस्वरूप सम्बन्धकारक चिन्ह तथा बहुवचन प्रत्यय को छोड़कर। हिन्दी की उपभाषाओं, बोलियों, व्यवहारिक हिन्दी, मानक हिन्दी में बोला जाता है- 'ग़ालिब का दीवान'। उर्दू की ठेठ स्टाइल में कहा जाएगा - ' दीवाने ग़ालिब '। (अब दैनिक हिन्दी समाचार पत्रों में इस प्रकार के प्रयोग धड़ल्ले से हो रहे हैं।) हिन्दी में 'मकान' का अविकारी कारक बहुवचन वाक्य में 'मकान' ही बोला जाएगा। 'उसके तीन मकान'। उर्दू में 'मकान' में 'आत' जोड़कर बहुवचन प्रयोग किया जाता है - 'मकानात'। विकारी कारक बहुवचन वाक्य में प्रयोग होने पर हिन्दी-उर्दू में 'ओं' जोड़कर 'मकानों' ही बोला जाएगा। 'मकानों को गिरा दो ' - यह प्रयोग हिन्दी में भी होता है तथा उर्दू में भी। कुछ शब्दों का प्रयोग हिन्दी में स्त्रीलिंग में तथा उर्दू में पुल्लिंग में होता है। हिन्दी में ' ताज़ी ख़बरें ' तथा उर्दू में 'ताज़ा ख़बरें '। इस प्रकार का अन्तर 'पश्चिमी-हिन्दी' तथा 'पूर्वी-हिन्दी' की उपभाषाओं में कई शब्दों के प्रयोग में मिलता है। इनको छोड़कर हिन्दी-उर्दू का ग्रामर एक है। चूँकि इनका ग्रामर एक है ।

हिन्दी - उर्दू उसलूब (शैली)

हिन्दी-उर्दू भाषा की दृष्टि से एक है। इसलिए बोलचाल में दोनों में फ़र्क नहीं मालूम पड़ता।
'साहित्यिक भाषा' में भाषा के अलावा अन्य बहुत से तत्व होते हैं। साहित्य में कथानक होता है, वहाँ किसी की किसी से उपमा (सिमिली) दी जाती है, अलकृंत शैली (ऑरनेट स्टाइल) होती है, प्रतीक रूप में (सिम्बॉलिक) वर्णन होता है, छंद (मीटर) होते हैं। प्रत्येक देश के साहित्य की अपनी परम्परा होती है,

कथा, कथानक, कथानक-रूढ़ियों, अलंकार-योजना, प्रतीक-योजना, बिम्ब-योजना, छंद-विधान की विशेषताएँ होती हैं। एक भाषा-रूप से 'हिन्दी-उर्दू' की दो साहित्यिक शैलियाँ (स्टाइल्स) विकसित हुईं। एक शैली 'आधुनिक हिन्दी साहित्य' कहलाती है जिसमें भारतीय प्रतीकों, उपमानों, बिम्बों, छंदों तथा संस्कृत की तत्सम एवं भारत के जनसमाज में प्रचलित शब्दों का प्रयोग होता है तथा जो देवनागरी लिपि में लिखी जाती है।

'उर्दू' स्टाइल के अदबकारों ने अरबी एवं फ़ारसी-साहित्य में प्रचलित प्रतीकों, उपमानों, बिम्बों, छंदो का अधिक प्रयोग किया। जब अरबी-फ़ारसी अदब की परम्परा के अनुरूप या उससे प्रभावित होकर साहित्य लिखा जाता है तो रचना में अरबी साहित्य तथा फ़ारसी-साहित्य में प्रयुक्त होने वाले शब्दों का बहुल प्रयोग तो होता ही है, उसके साथ-साथ शैलीगत उपादानों तथा लय और छंद में भी अन्तर हो जाता है जिससे रचना की ज़मीन और आसमान बदले-बदले नज़र आने लगते हैं। यदि कथानक रामायण या महाभारत पर आधारित होते हैं तो 'रचना-वातावरण' एक प्रकार का होता है, यदि कथानक 'लैला-मज़नूँ', 'युसुफ-जुलेखा', 'शीरी-फ़रहाद' की कथाओं पर आधारित होते हैं तो 'रचना-वातावरण' दूसरे प्रकार का होता है।

उपमा 'कमल' से या चाँद से दी जाती है तो पेड़ की एक शाखा पर जिस रंग और ख़ुशबू वाले फूल खिलते हैं, उससे भिन्न रंग और ख़ुशबू वाले फूल पेड़ की दूसरी शाखा पर तब खिलने लगते हैं जब उपमान 'आबे जमजम', 'कोहेनूर', 'शमा', 'बुलबुल' आदि हो जाते है। बोलचाल में तो 'हिन्दी-उर्दू' बोलने वाले सभी लोग रोटी, पानी, कपड़ा, मकान, हवा, दूध, दही, दिन, रात, हाथ, पैर, कमर, प्यास, प्यार, नींद, सपना आदि शब्दों का समान रूप से प्रयोग करते हैं, मगर जब 'चाँद उगा' के लिए एक शैली के साहित्यकार 'चन्द्र उदित हुआ' तथा दूसरी शैली के अदबकार 'माहताब उरुज हो गया लिखने लगते हैं तो एक ही भाषा-धारा दो भिन्न प्रवाहों में बहती हुई दिखाई पड़ने लगती है। जब साहित्य की भिन्न परम्पराओं से प्रभावित एवं प्रेरित होकर लिखा जाता है तो पानी की उन धाराओं में अलग-अलग शैलियों के भिन्न रंग मिलकर उन धाराओं को अलग-अलग रंगों का पानी बना देते हैं।"